शोध संचयन
A Refereed Research Journal
And a complete Periodical dedicated to
Humanities & Social Science Research
ISSN 0975 1254 (PRINT)
ISSN 2249-9180 (ONLINE)
www.shodh.net
Vol. 10
Issue 1
15 January 2019

महाकवि शचीन्द्र भटनागर और 'क्रांति के स्वर'

बीज शब्द :

शचीन्द्र भटनागर, क्रांति के स्वर, युग-सैनिक, नारी सशक्तिकरण, नारी जागरण

महाकवि शचीन्द्र भटनागर स्वातन्त्र्योत्तर भारत के महान साहित्यकारों में से एक हैं। बहुआयामी काव्य प्रतिभा से धनी साहित्यकार शचीन्द्र भटनागर ने एक-से-एक महत्वपूर्ण कृति हिन्दी को दी हैं। इस दृष्टि से वे मूलतः गीतकार हैं। उनकी अनेकानेक गीत कृतियों में से 'क्रान्ति के स्वर' एक उल्लेखनीय गीत कृति है जिसमें कवि के क्रान्तिकारी विचारों की सुन्दर अभिव्यक्ति हुई है।

गीत-सृजन की एक महत्वपूर्ण विशेषता सामाजिक चेतना की अनुभूति और अभिव्यक्ति है। सामाजिक अनुभूति और गीत की भाव-प्रवणता ने इन की रचनाओं को विशेष मार्मिकता और सजीवता प्रदान की। सामाजिकता की अभिव्यक्ति इन के काव्य में अनेक प्रकार से हुई है, जिसका आकर्षण पक्ष है जीवन के प्रति उनकी गहन आस्था। स्वातन्त्र्योत्तर हिंदी-गीतकारों में शचीन्द्र भटनागर जी ऐसे सशक्त हस्ताक्षर हैं, जिनकी गीत-सृष्टि में प्रकृति और प्रणय व्यक्ति और समष्टि को पूर्ण संतुलन के साथ अभिव्यक्ति मिली है। इनके गीतों में जहाँ स्वस्थ और ताज़ा श्रृंगारिक अनुभूतियाँ व्यक्त हुई हैं, वहीं प्रकृति के अनेक रंग-बिरंगे चित्र भी उभरे हैं। जहाँ उनके गीतों ने देश के स्वर के साथ स्वर मिलाया है, वहीं सामाजिक संत्रस और छटपटाहट भी उनमें मुखरित हुई है। इनके गीत मानवीय मूल्यों के पुंज हैं, उनके द्वारा भारतीय सामाजिक जीवन की प्रबल अभिव्यक्ति हुई है।

*****

डॉ॰ महेश 'दिवाकर',
डी॰लिट्॰, प्रोफेसर एमिरिटस,
से॰नि॰ प्रोफेसर, हिन्दी विभाग,
हिन्दू कॉलेज, मुरादाबाद

स्वाति रस्तोगी
शोधार्थी (हिन्दी)
E-mail: swati29rastogi29@gmail.com

महाकवि शचीन्द्र भटनागर और 'क्रांति के स्वर'

गीतकार शचीन्द्र भटनागर निम्न मध्यवर्गीय परिवार में पले-बढ़े फलतः उन्होंने आर्थिक-सामाजिक विषमताओं एवं विकृतियों को बहुत नज़दीक से देखा है। कदम-कदम सामाजिक विषमताओं अवरोधों से साक्षात्कार के कारण कभी निराशा तो कभी साहस की अनुभूति उन्हें होती रही है। रूढ़ियों को मन से नकारकर भी जीवन का प्रारंभिक चरण उनके बीच बिताने का दंश उन्होंने झेला है। इन सबके प्रति उन्हें क्रांतिकारी दृष्टि मिली, युग ऋषि पं॰ श्रीराम शर्मा आचार्य से, जिनके दर्शन का सौभाग्य भले ही उन्हें वर्ष 1954 में मिल गया था इस तथ्य को उन्होंने 'हिरना लौट चलें' में यूँ स्वीकारा है-

तेरी इस धरती पर/मेरे उन पथरीले पथ पर बहने वाले गीतों को दिशा मिली/गंगा की शाश्वत धारा से जुड़ जाने की चाह मिली/सीमित सुख से ऊपर/शिखर-शिखर चढ़ने की चिंतन को तृषा मिली। [1]

'क्रांति के स्वर' के गीतों में उनकी वही क्रांतिकारी दृष्टि विद्यमान है। ये गीत नारी-जागरण, दुष्प्रवृत्ति-उन्मूलन, सत्प्रवृत्ति-संवर्धन, कुरीति-उन्मूलन, व्यशनमुक्ति एवं विवाहोन्माद-विषयक हैं। इन गीतों में एक ओर छुआछूत की भावना तथा ऊँच-नीच की विचारधारा का प्रतिरोध किया गया है तो दूसरी ओर कर्म से ब्राह्मणत्व अपनाने पर बल दिया गया है। आज मनुष्य कला-संगीत एवं साहित्य के द्वारा समाज को दिशा देने, मानवीय रुचि का युगानुरूप परिष्कार करने के स्थान पर मन की कुत्सा बढ़ाकर मात्र धन बटोरने में लगा हुआ है। यह पतन की पराकाष्ठा है इसे समाप्त करने के लिए कवि युग-सैनिकों के स्वर में स्वर मिलाता हुआ कहता है-

पश्चिम का यह नशा छोड़ दो, अब भी आँखें खोलो,
कितना पतन हुआ इस पथ पर, अपना हृदय टटोलो,
बन जाओ शालीन, अन्यथा पशु ही कहलाओगे,
जो गौरव-गरिमा खोई है, पुनः नहीं पाओगे। [2]

कवि समाज में ऐसी चेतना उत्पन्न करना चाहता है, जिससे कन्या की विद्या, शालीनता, सुसंस्कारिता एवं सद्गुणों की तुलना में दहेज की मॉग की लोभ प्रवृत्ति की भर्त्सना की जाए तथा दहेज़-लोभियों की उपेक्षा की जाए। कवि बेबाक शब्दों में दहेज-लोभियों को धिक्कारता है-

जिसे पिता ने पाला-पोसा निर्धनता-खुशहाली में,
आज उसकी कन्या को सौंपा इस कुल की रखवाली में,
उसी पिता से धन लेने में तुमको लाज न आती है,
धन-लिप्सा ही अरे! पुत्र की बोली भी लगवाती है,
धन-आभूषण-कन्या का वह दाता है, तुम याचक हो,
बोलो, तुम उसके समक्ष फिर कैसे आँख उठाओगे। [3]

संकल्प के प्रथम पांच गीत युवा पीढ़ी से संबंधित हैं। इन गीतों में शचीन्द्र जी युवकों को युग सैनिक, सृजन सैनिक, क्रांति सेना के सिपाही, युगनिर्माणी आदि नामों से संबोधित करते हैं। युग-सैनिक की आचार संहिता शीर्षक गीत में युग-परिवर्तन के लिए युग-सैनिकों का आह्वान किया गया है। कवि का विचार है कि युग-सैनिकों की सर्वप्रथम विशेषता है- उनमें आत्महीनता का अभाव है और उनका दृढ़ आत्मविश्वास। अपनी मार्गदर्शक सत्ता के प्रति प्रगाढ़ निष्ठा एवं अटल आस्था ही उनमें वांछित आत्मविश्वास उत्पन्न कर सकती है। सामाजिक आचरण वाले युग-सैनिक ही समाज को अभिनव स्वरूप प्रदान कर सकते हैं। उन्हें समझाते हुए कवि कहता है कि तुम उसके पात्र हो, अधिकारी हो, शंका मत करो, तुम्हारी मार्गदर्शक सत्ता तुम्हारे साथ है। वह जनमंगल के लिए तुम्हें सदैव संकेत देती रहेगी। लाचारी का भाव मन में कभी मत लाना, क्योंकि तुम तो शक्ति-पुंज के वंशज हो। आज शस्त्रबल नहीं, बुद्धिबल की ही प्रधानता है। दुर्बुद्धि ही मानव को स्वेच्छाकारी बनाकर आत्मघात के लिए प्रेरित कर नित नई आपदाओं को आमंत्रण दे रही है। इसे युवाशक्ति ही रोक सकती है, वैचारिक क्रांति से कवि यह देखकर हैरान है -

इतने हुए न कभी जागरण, प्रवचन, यज्ञ, कथाएं हैं,
किंतु कभी बढ़ सकीं न मन की इतनी अधिक व्यथाएं हैं। [4]

युग-सैनिक ही अपने प्रामाणिक आचरण से दुर्गंधित नगर-गाँव के गलियारों को सत्कर्मों एवं सद्विचारों के सौरभ से महका सकते हैं। कवि उन्हें 'धरती के रक्षक' के सम्मान से विभूषित करते हुए कहता है कि समाज में व्याप्त दुश्चिंतन को अपने सत्साहस से वही समाप्त कर सकते हैं, क्योंकि सारे शोषण, अनाचार, क्रूरता एवं विध्वंस का मूल दुश्चिंतन है कवि कहता है-

दुश्चिंतन के कारण शोषण-अनाचार नित होता है,
बहू जलाई जाती घर में और पड़ोसी सोता है,
करूणा नहीं जनमती मन में, सब करते मनमानी हैं,
सिर्फ ध्वंस की बात सोचते अन्वेषक-विज्ञानी हैं। [5]

अनाचार का मूल कारण है दुश्चिंतन। अकृष्ट जीवन की प्रेरणा देने वाले सत्साहित्य के अभाव में मानव दुर्बुद्धि का शिकार हो गया है। 'युग सैनिकों की प्रतिज्ञा' शीर्षक गीत में युवा-शक्ति प्रतिज्ञा करती है-

हमने शपथ उठाई सारे जग में क्रांति मचाने की,
गुरु के चिंतन से बदलेंगे उलटी चाल ज़माने की। [6]

चिंतन की दिशा ठीक हो जाएगी तो कर्मो की दिशा भी सृजनात्मक हो जाएगी और इस प्रकार समाज की समस्याएँ स्वयमेव हल हो जाएँगी। दुश्चिंतन को श्रेष्ठ चिंतन में परिणत करने का एक ही उपाय है-श्रेष्ठ साहित्य का सृजन। इसीलिए युग- सैनिक प्रतिज्ञा करते हैं -

गीतकार-कवि को नारी का हम सम्मान सिखाएंगे,
उपन्यास-लेखक को उनका दुष्प्रभाव दिखलाएँगे,
चित्र, सिनेमा, केबिल टी0वी0 अब अश्लील नहीं होंगे,
दुर्सपनों के कारण जीवन गंदी झील नहीं होंगे। [7]

कवि ने सृजन सैनिकों के सामूहिक अभियान के द्वारा समाज के प्रत्येक क्षेत्र में वैचारिक क्रांति की कल्पना की है। अब साधनों से वंचित गांव हो या भेड़चाल वाले नकलची नगर, दुर्व्यषनियों के दल हों या पर्यावरण-प्रदूषण के क्षेत्र, कलुषग्रस्त मन हों अथवा कुपोषणग्रस्त नई पीढ़ी, त्रस्त अपमानित नारी-जाति हो या अशालीन उच्छृंखल जीवनशैली-कोई भी क्षेत्र इस क्रांतिसेना के प्रयाणरत क़ाफिले से अप्रभावित न रह सकेगा -

काफिला चल पड़ा है सृजन के लिए,
साहसी आ रहे, अनुगमन के लिए,
नारियों का न अपमान होगा यहाँ,
कर्म में ईश का ध्यान होगा यहाँ।
पुत्र नीलाम होंगे न धन के लिए,
ब्याह होंगे मनों के मिलन के लिए,
बिन खिले अब झरेगी न कोई कली,
क्रांति-सेना चली, क्रांति-सेना चली। [8]

दहेज-लिप्सा के प्रति भर्त्सना के इसी भाव को आगे बढ़ाते हुए कवि उन पिताओं को ललकारता है कि अब भी अपने पुत्र को नीलाम करने, बेचने अथवा दहेज की भीख माँगने की प्रवृत्ति से बचो। इस अपमानजनक स्थिति से उबरकर भीख माँगना बंद करो, सुसंस्कार वाली प्रवृत्ति अपनाकर गौरवशाली पिता होने का सम्मान प्राप्त करो अन्यथा ऐसी स्थिति भी उत्पन्न हो सकती है कि विवेकवान नई पीढ़ी ही तुम्हारा विरोध करने लगे। तुम्हारे पुत्र ही विद्रोही बनकर तुम्हारी इस लोक की प्रवृत्ति को अस्वीकार कर दें। अपनी इस दूरदर्शितापूर्ण चेतावनी को कवि इस प्रकार व्यक्त करता है -

अगर न अब भी संभले तो सुत विद्रोही बन जाएंगे,
वही तुम्हारी घोर अवज्ञा के दोषी कहलाएंगे,
तुम दहेज माँगोगे लेकिन युग नहीं स्वीकारेंगे,
घोर पाप के लिए तुम्हें युग-सेनानी धिक्कारेंगे। [9]

परिवार के दीर्घकालीन पवित्र वातावरण के सृजन का आधार विवाह-संस्कार आज एक समारोह बनकर रह गया है, जिसमें हर ओर उद्धत अहंकार का प्रदर्शन एवं अनुशासनहीन उच्छृंखलता का आवेग ही दिखाई देता है। कविवर शचीन्द्र भटनागर इसकी आलोचना करते हुए वर-पक्ष से प्रश्न करते हैं -

झिलमिलाते अश्व पर सुत को चढ़ाया किसलिए,
कर्णभेदी शोर का साधन जुटाया किसलिए,
आज यह ऐश्वर्य-वैभव का प्रदर्शन क्यों किया,
धन व साधन माँगने का आज यह मन क्यों किया। [10]

बारात में बरती जाने वाली अमर्यादित अनुशासनहीनता के चित्रण में कवि के हृदय की वेदना झलकती है। देखिए -

अब किसी को भी न छोटे या बड़े का ध्यान है,
अब बारातों में न बिल्कुल स्नेह या सम्मान है,
सब यहाँ मदिरा पिए निर्लज्जता से घूमते,
नाचते-फिरते सड़क पर लड़खड़ाते-झूमते,
लग रही बारात, जैसे मद्यपों की भीड़ हो। [11]

शचींद्र जी का मानना है कि विवाह वैदिक ऋचाओं से अभिमंत्रित दिव्य उपहार है, यह जल एवं मधुरता के विलय के समान परस्पर रूपांतरण की प्रक्रिया है, यह श्रद्धा-समर्पण का सुमंगल पर्व है। इसे प्रदर्शनपूर्ण समारोह का नहीं सत्संकल्प एवं सद्गुण-वरण का स्वरूप प्रदान किया जाना ही श्रेयस्कर है। नारी शिक्षित और आत्मनिर्भर बने इसीलिए एक मर्मस्पर्शी गीत के माध्यम से वह एक भाई के द्वारा बहन को शिक्षित तथा आत्मनिर्भर होने की प्रेरणा दिलवाते हैं। विवाह करके पशुवत् जीवन जीने से कहीं अच्छा है कि आत्मनिर्भर रहकर स्वाभिमान के साथ जीवन व्यतीत करे, भले ही उसे अविवाहित क्यों न रहना पड़े। इस मार्मिक सलाह का एक अंश देखिए-

बड़े-बड़े ठग हैं वे सब, क्रूर हैं लुटेरे हैं वे,
पैसे के आगे तेरे हैं न वे, न मेरे हैं वे,
ऐसे कपटी से कोई आस मत लगाना री बहना!
ऐसे घर में जीवन को नरक मत बनाना री बहना!
नरक मत बनाना, चाहे क्वाँरी रह जाना।। [12]

परदा-प्रथा के कारण नारी में जन्मी आत्महीनता, आत्मभीरूता, अनुभवहीनता एवं कूपमंडूकता से उसे मुक्त किया जाए। नारी की दयनीय दशा का एक गीत में बड़ा करूणापूर्ण चित्रण करते हुए वह कहते हैं -

परदे में हर नारी अनुभवहीन बनी है,
आत्म-भीरू, आशंकित, दीन बनी है,
ऐसी नारी से समाज का क्या हित होगा। [13]

और

आधी शिक्षा भी उसकी हो सकी न पूरी है,
हर इच्छा, हर अभिलाषा रह गई अधूरी है,
घर की देहरी तक उसके विचरण की सीमा है,
केवल घूँघट ही उसके चिंतन की सीमा है,
हीन-भावना में डूबी, अपने से ऊबी-सी,
जीवित शव जैसा जीवन मिला थकी-हारी को। [14]

नारी की इस दुर्दशा के फलस्वरूप समाज को होने वाली भारी क्षति के प्रति भी कवि सबको सचेत करता है –

जिस घर में माँ आदर्शों-अनुभव से खाली है,
वहाँ न सुख-चैन कहीं है, वहाँ न खुशहाली है। [15]

भारतीय नारी की आत्मचेतना जाग्रत हो रही है, शिक्षा, राजनीति, न्याय, प्रशासन, पुलिस, वायुसेना, चिकित्सा, अभियंत्रण आदि सभी क्षेत्रों में वह अपनी कार्य क्षमता सिद्ध कर रही है। इतने पर भी नारी समाज का बहुत बड़ा वर्ग आज भी अशिक्षा एवं आज्ञानता के कारण कुरीतियों, मूढ़ मान्यताओं और अंधविश्वासों की श्रृंखलाओं में जकड़ा है। उन सबसे मुक्त कराने के लिए विकासशील नारी-वर्ग आगे आ रहा है। मुक्ति के संकल्प का यह स्वर नारियों में उठा रहा है। देखिए –

अनपढ़ नहीं रहेगी हममें से कोई,
नहीं रहेगी आत्महीन रोई-रोई। [16]

और

अब न अंधविश्वास हमें छल पाएगा,
नए रूप में विश्व हमें कल पाएगा। [17]

आज नारी समझ गई है कि पुरुष की शक्ति वही है। उसके बिना पुरुष अधूरा है, अशक्त है। अशक्त माताओं की सशक्त संतानें संभव नहीं हैं। समाज को युगांतरकारी पीढ़ी प्रदान करने के लिए उनका जागरण आवश्यक है –

अब न केवल क्रीत दासी, सेविका-सी,
हम यहाँ शोषित-तिरस्कृत रह सकेंगी,
मात्र रमणी, कामिनी, अबला बनी हम,
अब न अत्याचार सबके सह सकेंगी। [18]

किंतु यह नारी-जागरण पश्चिमी सभ्यता से प्रभावित नहीं होगा। देव संस्कृति से प्रेरित यह जागरण लोकमंगल की भावना से अनुप्राणित होगा –

जागरण है यह, न यह स्वच्छंदता है,
है न पश्चिम की हमारी ऐषणाएँ,
हम मशालें थामकर आगे बढ़ी हैं,
देव संस्कृति के लिए सत्प्रेरणाएं,
लोकमंगल की हमारी भावनाएँ,
त्रस्त मानव के लिए सुखकर बनेंगी। [19]

इस नारी-जागरण का सत्परिणाम समाज को भावी इतिहास-स्रजेताओं, विचारकों, संस्कृति-पुरुषों एवं साहसी कन्याओं के वरदान के रूप में प्राप्त होगा–

फिर भरत-लवकुश धरा पर जन्म लेंगे,
फिर अभावों-बीच प्रतिभाएँ बढ़ेंगी,
साहसी वीरांगनाएँ विश्व में फिर,
घोर अत्याचार से संघर्ष लेंगी,
जननियाँ गाँधी-विवेकानंद को फिर,
जन्म देंगी और श्रेयस्कर बनेंगी। [20]

इस प्रकार 'क्रांति के स्वर' के कई गीत नारी-जाति की इस दुर्दशा का मार्मिक चित्रण ही नहीं, उसके कारण समाज को होने वाले भयंकर परिणामों की ओर पुरुषवर्ग का ध्यान आकृष्ट करते हैं तथा समस्या का समाधान भी प्रस्तुत करते हैं। युग-निर्माण योजना के सूत्रधार युग ऋषि पं॰ श्रीराम शर्मा आचार्य का उद्घोष हैं – 'मानव-मात्र एक समान'। कवि ने इस भावना को पूरी निष्ठा के साथ अपने गीतों में स्वर दिया है। श्रेष्ठ आचरण, शालीनता एवं प्रामाणिकता से मनुष्य महान बनता है, किसी धर्म अथवा जाति में जन्म लेने से नहीं। इस भाव का प्रस्तुतीकरण करती ये पंक्तियाँ देखिए –

जाति-धर्म की, भेद-भाव की बातें हुई पुरानी हैं,
सब धर्मों को गले लगाएँगे, हम युग-निर्माणी हैं।
कवि रसखान यहीं बृज की रज पाने को ललचाते थे,
सारे जहाँ से अच्छा भारत को इकबाल बताते थे,
फादर कामिल बुल्के ने भी यहाँ प्रतिष्ठा पाई थी,
मदर टेरेसा इसी भूमि पर भारतरत्न कहाईं थीं। [21]

हमारी संस्कृति में गुण-कर्म-स्वभाव की उत्कृष्टता के आधार पर किसी भी कुल-जाति-धर्म में जन्मा व्यक्ति पूजनीय बन जाता है –

हमने पूजा वाल्मीकि ऋषि को, रेदास-कबीरा को,
राजभवन को त्याग चली आई मतवाली मीरा को। [22]

इसीलिए शचीन्द्र जी का परामर्श है कि –

ऊँचे कुल का दंभ छोड़कर श्रेष्ठ कर्म करना सीखो,

मर कर अमर बनो, मत जीकर रोज़-रोज़ मरना सीखो। [23]

गृहस्थ जीवन को सुव्यवस्थित, सुसंस्कारित, सुरम्य बनाने की सलाह कवि ने, 'डूबते जलयान से जीवन' शीर्षक गीत में दी है। जनसंख्या की बेतहाशा वृद्धि के फलस्वरूप डूबते जलयान में समान विनाश की ओर बढ़ते परिवारों को देखकर कवि चिंतित होकर कहता है –

घोर जंगल में उगे बौने विटप-से,
देह-मन से आदमी बीमार हैं अब,
हर निमिष उगते असंख्यों तरू-लताएँ,
यदि न इनके जन्म पर अंकुश लगेगा,
तो विषैला वन बनेगा विश्व सारा,
साँस लेना भी न संभव हो सकेगा। [24]

कवि केवल यथार्थवादी चित्रण करके चेतावनी ही नहीं देता है, वह समस्या का समाधान भी प्रस्तुत करता है। उनके अनुसार आचार्यश्री की संकल्पना के अनुरूप गृहस्थाश्रम को यदि तपोवन मानकर आत्मसंयम को उसका आधार बना लिया जाए तो परिवारों में सुख-शांति का वातावरण छा जाएगा –

गृहस्थाश्रम के तपोवन का यहाँ पर,
आत्मसंयम यदि सुदृढ़ आधार होगा,
स्वस्थ शिशुओं की सुखद किलकारियों से,
स्वर्ग-सा संतुष्ट घर परिवार होगा। [25]

कवि का मतव्य है कि नशा करना ही है तो भारत माता की, समाज की रूढ़ियों को नष्ट करने का नशा करो जो नशा मातृभूमि की सरहदों पर जांबाज़ सैनिकों में होता है, गिरते हुए व्यक्तियों को उठाने का समाज के असहायों-दुखियारों को सहारा देने का जो नशा समाज-सुधारकों में होता है, वह नशा करो। देखिए कितनी सरल शब्दावली में 'शचीन्द्र' जी कहते हैं –

है नशा करना, करो, जो लाभ सबको दे सके,
हो नशा ऐसा, दिशा जो देशभर को दे सके,
जो नशा था भगतसिंह-से प्राणवानों में यहाँ,
सरहदों पर जो नशा होता जवानों में यहाँ। [26]

समाज में आज भी अनेकों ऐसी परंपराएँ जीवित हैं, जो न तो तर्क की कसौटी पर खरी उतरती हैं, न ही मनोविज्ञान की दृष्टि से उचित प्रतीत होती हैं, प्रदर्शन की प्रवृत्ति के कारण आज मृत्युभोज जैसी सामाजिक कुरीतियाँ शिक्षा के प्रचार-प्रसार के बावजूद भयंकर रूप में बढ़ती ही जा रही हैं। तेरहवीं की दावत में सम्मिलित होने वाले व्यक्ति हँसी-मज़ाक करते हैं। सुहागिन से विधवा बनने की वेदना अथवा पिता की लाड़ली संतान से अनाथ हो जाने के दुख से मृत्यु-भोज में सम्मिलित होने वालों का कोई सरोकार नहीं होता है। इस करूणापूर्ण स्थिति का मार्मिक चित्रण शचींद्र जी इस प्रकार करते हैं –

जिस घर में बूढ़ी माँ वंचित हुई लाड़ले लाल से,
टूट गई चूड़ियां, पुंछा सिंदूर बहू के भाल से,
स्यानी बहिन कुँआरी गुमसुम है भाई की याद में,
पर डूबे हैं इधर सभी खाने-पाने के स्वाँग में,
उधर उमड़ पड़ती आँखों से अब भी जल की धार है,
मृत्युभोज सब वहीं खा रहे, कैसा अत्याचार है। [27]

निष्कर्षत: 'क्रांति के स्वर' के गीतों में शचींद्र जी के विचार समयोपयोगी हैं। वर्तमान परिस्थितियों में इस प्रकार के गीतों की आवश्यकता है, जिससे नई पीढ़ी संस्कृति की धरती से जुड़ी रह सके जिसके मन में मानवता के प्रति तनिक भी प्रेम है, उसे वह सब करना होगा जो 'क्रांति के स्वर' के गीतों में व्यक्त किया गया है। 'क्रांति के स्वर' के गीतों में व्यक्ति को भीतर तक झकझोरकर समाज की विकृतियों पर प्रहार के संकल्प को दृढ़ करने की शक्ति है। कविवर शचींद्र भटनागर ने समाज को परिवर्तन की दिशा दी है। वह ऐसे उत्कृष्ट सृजनधर्मी हैं, जो सृजन का उद्देश्य भली प्रकार समझते हैं। तभी वह साहसपूर्वक साहित्यकारों व कलाकारों से कहते हैं –

क्या है लक्ष्य तुम्हारी कृति का, यह विचारना होगा,
पाठक और दर्शक में सत्-चिंतन उभारना होगा,
शुभ समाज के लिए समर्पित जो व्यक्तित्व न होगा,
उस कवि-कलाकार का नवयुग में अस्तित्व न होगा। [28]

सारत: 'क्रान्ति के स्वर' कवि की क्रान्तिकारी रचनाओं का गुलदस्ता है।

संदर्भ

1. हिरना लौट चलें, शचींद्र भटनागर, प्रकाशक का नाम एवं पता, पृ०-61
2. क्रांति के स्वर, शचीद्र भटनागर, प्रकाशक का नाम एवं पता, पृ०-13
3. वही, पृ०-15
4. क्रांति के स्वर, शचींद्र भटनागर, प्रकाशक का नाम एवं पता, पृ०-5
5. वही, पृ०-5
6. वही, पृ०-6
7. वही, पृ०-7
8. वही, पृ०-8, 9
9. वही, पृ०-17
10. वही, पृ०-18
11. वही, पृ०-19
12. वही, पृ०-21
13. वही, पृ०-23
14. वही, पृ०-24

शेष पृष्ठ 80 पर

जलाकर क्षार कर दूँ .....''[23]

निष्कर्ष रूप से कह सकते हैं कि कोहली जी ने अपने कृष्णपरक उपन्यासों में नारी स्वतन्त्रता, नारी स्वार्थ, नारी महत्त्वकांक्षा, नारी ईर्ष्या, नारी संघर्ष, नारी प्रकृति गुण, नारी कामना, नारी सौन्दर्य, नारी सर्व विजेता, नारी प्रेम, नारी की कर्त्तव्यनिष्ठा, नारी ममता, माया, नारी गौरव, नारी तेज, नारी स्वाभिमान, नारी सम्मान तथा नारी प्रतिशोध आदि को अपनी लेखनी रूपी तूलिका से चित्रित किया, जो नारी के सभी गुणों-अवगुणों का वर्णन करते हैं।

संदर्भ

1. महासमर - 1 बन्धन - डॉ0 नरेन्द्र कोहली पृ0 81
2. वही पृ0 81
3. वही पृ0 175
4. वही पृ0 215
5. वही पृ0 17
6. वही पृ0 435
7. वही 5 अन्तराल वही पृ0 274
8. वही 3 कर्म वही पृ0 370-71
9. वही 5 अन्तराल वही पृ0 255
10. वही 3 कर्म वही पृ0 149
11. वही 6 प्रच्छन्न वही पृ0 429
12. वही 6 प्रच्छन्न वही पृ0 429
13. वही 3 कर्म वही पृ0 301
14. वही 1 बन्धन वही पृ0 306
15. वही 4 धर्म वही पृ0 160
16. वही 6 प्रच्छन्न वही पृ0 389
17. वही 4 धर्म वही पृ0 333
18. वही वही पृ0 333
19. वही 6 प्रच्छन्न वही पृ0 82
20. वही पृ0 90
21. वही पृ0 94
22. वही पृ0 89
23. वही पृ0 91

◆◆◆

पृष्ठ 68 का शेष **श्रीमद्भगवद्गीताः शिक्षा का उद्देश्य मानवीयता का.....**

संदर्भः

1. शिक्षा के सिद्धान्त, विजेन्द्र कुमार वशिष्ठ, पृष्ठ 14 ।
2. शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय आधार, डॉ सरोज सक्सेना, पृष्ठ 53 ।
3. द्रष्टव्य, शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय आधार, डॉ सरोज सक्सेना, पृष्ठ 69 ।
4. श्रीमद्भगवद्गीता, श्री राजगोपालाचार्य, पृष्ठ 78 ।
5. श्रीमद्भागवद्गीता, श्री राजगोपालाचार्य, पृष्ठ 79 ।
6. शिक्षा के तात्त्विक सिद्धान्त, पृष्ठ 14 ।
7. श्रीमद्भगवद्गीता, जीवन-विज्ञान, धर्मेन्द्र मोहन सिन्हा, पृष्ठ 178 ।
8. श्रीमद्भगवद्गीता, जीवन-विज्ञान, धर्मेन्द्र मोहन सिन्हा, पृष्ठ 179 ।
9. श्रीमद्भगवद्गीता, जीवन-विज्ञान, धर्मेन्द्र मोहन सिन्हा, पृष्ठ 178 ।
10. श्रीमद्भागवद्गीता, 2/60 ।
11. श्रीमद्भागवद्गीता, श्री राजगोपालाचार्य, पृष्ठ 79 ।
12. श्रीमद्भागवद्गीता 6/4 ।
13. श्रीमद्भगवद्गीता, जीवन-विज्ञान, धर्मेन्द्र मोहन सिन्हा, पृष्ठ 175 ।

◆◆◆

पृष्ठ 61 का शेष **महाकवि शचीन्द्र भटनागर और.....**

15. वही, पृ॰-25
16. वही, पृ॰-37
17. वही, पृ॰-37
18. वही, पृ॰-39
19. वही, पृ॰-39
20. वही, पृ॰-39
21. वही, पृ॰-26
22. वही, पृ॰-27
23. वही, पृ॰-29
24. वही, पृ॰-34-35
25. वही, पृ॰-35
26. वही, पृ॰-43
27. वही, पृ॰-48
28. वही, पृ॰-11

◆◆◆